इकाई 4 वृहस्पतिचार

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 वृहस्पतिचार का परिचय

- 4.2.1 वृहस्पति का स्वरूप
- 4.2.2 वृहस्पति के वर्ण का फल

4.3 वृहस्पति के बारह वर्षों के नाम और फल

- 4.3.1 कार्तिक, मार्गशीर्ष ,पौष वर्ष का फल
- 4.3.2 माघ ,फाल्गुन, चैत्र वर्ष का फल
- 4.3.3 वैशाख ,ज्येष्ठ, आषाढ वर्ष का फल
- 4.3.4 श्रावण ,भाद्रपद, आश्विन वर्ष का फल

4.4 संवत्सर पुरुष के नक्षत्रवश अंग विभाग

4.5 संवत्सर का फल

- 4.5.1 प्रभव संवत्सर का फल
- 4.5.2 विभाव आदि चार संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.3 द्वितीय युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.4 तृतीय युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.5 चतुर्थ युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.6 पंचम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.7 षष्ठ युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.8 सप्तम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.9 अष्टम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.10 नवम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.11 दशम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.12 एकादश युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल
- 4.5.13 द्वादश युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 सन्दर्भ ग्रंथ

4.9 बोधप्रश्न

4.0 उद्देश्य

वृहस्पतिचार नामक इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप-

- वृहस्पतिचार का परिचय दे सकेंगे।
- वृहस्पति के बारह वर्षों के नाम और फल समझा सकेंगे।
- संवत्सर पुरुष के नक्षत्रवश अंग विभाग का परिचय दे सकेंगे।
- संवत्सर का फल समझा सकेंगे।
- वृहस्पति के वर्ण का फल समझा सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

प्रिय अध्येयता ! वृहस्पतिचार नामक इस इकाई में स्वागत है। इसके पूर्व की इकाई में आप बुध चार का अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में वृहस्पति चार से संबंधित सभी विषयों का उपास्थापन कर सकेंगे। ज्योतिष शास्त्र में वृहस्पति को बहुत ही महत्वपूर्ण ग्रह माना गया है। वृहस्पति ग्रह को ज्योतिष शास्त्र में शुभ ग्रह की श्रेणी में रखा गया है और संहिता शास्त्र में देखते हैं कि वृहस्पति ग्रह का उदय लोक कल्याण के लिए होता है। अर्थात वृहस्पति का उदय शुभ माना जाता है और अस्त अशुभ माना जाता है। यदि वृहस्पति का वर्ण सुंदर तथा साफ होता है तो उसका फल शुभ होता है यदि वृहस्पति का वर्ण मालीन होता है तो लोगों के लिए अशुभकारी होता है। वृहस्पति के 12 वर्षों का नाम और फल इस इकाई में बताया गया है कि कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ ,फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ श्रावण ,भाद्रपद, आश्विन वर्ष का क्या फल होता है ? इसका विवेचन इसमें किया गया है जो आगे अध्ययन करेंगे।

ज्योतिष शास्त्र में 60 संवत्सरों का उल्लेख किया गया है जो प्रभाव आदि से अक्षय तक होते हैं। हम जब पंचांग को देखते हैं तो मुख्य पृष्ठ पर संवत्सर का नाम होता है और अलग अलग उनका फल भी होता है उन फलों का पृथ्वी पर और समाज में बहुत ही व्यापक प्रभाव होता है। ज्योतिष शास्त्र में संवत्सर फल के नाम से जानते हैं। संवत्सरों का नक्षत्र वश अंग विभाग किया गया है तथा प्रभव से अक्षय तक संवत्सरों का फल बताया गया है। इस प्रकार इस इकाई में वृहस्पति चार से संबंधित सभी विषयों का समावेश किया गया है। विशेष रूप से वृहस्पति का स्वरूप ज्योतिष शास्त्रीय तथा वैज्ञानिक मान्यताओं के अनुसार किया गया है जिसका अध्ययन आप करेंगे।

4.2 वृहस्पतिचार का परिचय

संहिता शास्त्र में वृहस्पति को महत्वपूर्ण ग्रह माना गया है। इनको देवगुरु की संज्ञा दी गई है, अर्थात् सभी देवताओं के गुरु, वृहस्पति हैं तो इस प्रकार उनको देव गुरु भी कहा जाता है। यद्यपि देव गुरु होने के फलस्वरूप उनका चार बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाता है। वृहस्पति जिस राशि पर या नक्षत्र पर संचार करते हैं उन उन राशियों एवं नक्षत्रों के फल को प्रभावित करते हैं। वृहस्पति के उदय होने पर सभी शुभ कार्य होते हैं यदि अस्त को प्राप्त होते हैं तो कोई भी महत्वपूर्ण शुभ कार्य नहीं होते हैं। यहां अस्त अर्थ है कि जब वृहस्पति, सूर्य के सन्निकट हो जाते हैं तो अस्त को प्राप्त होते हैं। मुहूर्त इत्यादि ग्रंथों में वृहस्पति के अस्त को बहुत ही महत्वपूर्ण माना गया है। वृहस्पति के अस्त हो जाने पर क्या- क्या कार्य नहीं होते हैं इस विषय में कहते हैं कि यदि वृहस्पति अस्त को प्राप्त हो जाए तो बावली, उपवन, तालाब कुआं ,भवन का नव निर्माण नहीं करना चाहिए ,और देव प्रतिष्ठा, गृहप्रवेश ,शिवरात्रि आदि व्रतों का आरंभ

नहीं करना चाहिए। किसी व्रत का उद्यापन, वधू प्रवेश ,षोडशमहादान, सोमयज्ञ ,अष्टका श्राद्ध, गोदान ,केशांत कर्म ,नवान्न भोजन, पोखरा ,प्याऊ, प्रथम श्रावणी कर्म ,उपनिषद् व्रत, महानवमी व्रत और वेद इत्यादि का आरंभ नहीं करना चाहिए। और भी आगे कहते हैं कि नीलोत्सर्ग ,देवता की स्थापना, गुरु से मंत्र ग्रहण करना , उपनयन, विवाह ,मुंडन प्रथम देवता दर्शन और तीर्थ गमन नहीं करना चाहिए। आगे और भी कहते हैं कि सन्यास , अग्निहोत्र , राजा का दर्शन, राज्याभिषेक ,चातुर्मास, समावर्तन , कर्णवेध इत्यादि कार्य वृहस्पति के अस्त होने पर नहीं करने चाहिए।आगे कहते हैं जो कार्य गुरु के अस्त में वर्जित है वह सिंह और मकर राशि के वृहस्पति में भी वर्जित है। कई और आचार्यों का मत है कि वृहस्पति के वक्र और अधिचारी होने पर तथा वृहस्पति और सूर्य एक राशि में हो तो तथा 13 दिन के पक्ष में भी शुभ कार्य नहीं करने चाहिए। इसके परिहार के विषय में भी कहते हैं कि गुरु सिंह राशि में हो और सिंह के नवमांश में हो तो विवाह अशुभ है परंतु किस क्षेत्र में अशुभ है इस विषय में कहते हैं कि गोदावरी नदी से उत्तर और गंगा नदी के दक्षिण पर्यंत भाग में आने वाले मध्य क्षेत्र और सिंह के वृहस्पति में शुभ कार्य नहीं करने चाहिए। अन्य देशों में यह दोष नहीं होता है यदि मेष राशि का सूर्य हो तो किसी भी देश में सिंहस्थ वृहस्पति का दोष नहीं लगता है।

वृहस्पति चार के विषय में मुहूर्त के आचार्यों ने लिखा है कि मघा नक्षत्र के चार चरण और पूर्वाफाल्गुनी का एक चरण इस तरह से पांच चरण तक सिंहस्थ गुरु सब देशों में निषेध है, शेष पूर्वा फाल्गुनी के तीन चरण और उत्तराफाल्गुनी का एक चरण इस प्रकार चार चरण गंगा और गोदावरी के मध्य के मेष राशि का सूर्य रहे तो गंगा और गोदावरी के मध्य देशों में उपनयन, विवाह आदि करना शुभ है, परंतु कलिंग, गौड और गुर्जर प्रदेश के संपूर्ण भाग सिंह का वृहस्पति वर्जित है ।इस विषय में कहा गया है कि नर्मदा नदी जो जबलपुर आदि क्षेत्रों से होकर बहती है उसके पूर्व गंडक नदी जो पटना बिहार के पास गंगा में जाकर मिल जाती है उसके पश्चिम ओर नदी के उत्तर तथा दक्षिण प्रदेशों में मकर राशि का वृहस्पति वर्जित नहीं है। हम जानते हैं कि यदि वृहस्पति मकर राशि में स्थित होता है तो नीचस्थ को प्राप्त होता है और कर्क राशि में होता है तो उच्च को प्राप्त होता है। यह नीच का वृहस्पति कोङ्कण, दक्षिण भारत के क्षेत्र , मगध ,(बिहार प्रांत को कहते हैं)गौड, और सिंधु प्रदेश में शुभ कार्य के लिए त्याज्य है। वृहस्पति के साथ संवत्सर का क्या संबंध है , आप इस इकाई में बहुत ही विस्तृत रूप से अध्ययन करेंगे परंतु यहां पर संक्षिप्त रूप से आप यह जानेंगे कि यदि गुरु वृष राशि मेष मीन कुंभ इनमें से भिन्न राशियों में वृहस्पति अतिचारी होकर यदि फिर पूर्व राशि में नहीं आवे तो लुप्त संवत्सर होता है यह लुप्त संवत्सर गंगा और नर्मदा नदी के बीच के क्षेत्रों में अर्थात् मध्य भारत और राजस्थान के क्षेत्रों में शुभ कार्य के लिए अत्यंत वर्जित है।

ग्रहभक्तियोगाध्याय में वृहस्पति के प्रदेश और उनके व्यक्तियों का उल्लेख किया गया है। सिन्धु नदी के पूर्व भाग, मधुरा के पश्चिमार्द्ध, भरत, सौवीर, उत्तर दिशा में रहने वाले, विपाशा नदी, शतद्रू नदी, शाल्व, तैगर्त, पौरव, अम्बष्ठ, पारत, वाटधान, यौधेय, सारस्वत, अर्जुनायन और मत्स्य देशों के ग्राम, हाथी, घोड़ा, पुरोहित, राजा, मन्त्री, मङ्गल कार्य (विवाह, उपनयन आदि) में सक्त, पौष्टिक कार्य संलग्न, दयालु, सत्य भाषण करने वाले, शौचयुत (दूसरे के धनादि को नहीं चाहने वाले), तपस्वी, विद्वान्, दानी, धर्मी, ग्राम में उत्पन्न होने वाले, वैयाकरण, अर्थ को जानने वाले, वेद को जानने वाले, अभिचारज्ञ, नीतिशास्त्र को जानने वाले, राजा के उपकरण (आयुध, आदि), छत्र, ध्वजा, चामर आदि, सुगन्ध द्रव्य, कुष्ट, नमक, मूंग आदि, मधुर रस, मधूच्छिष्ट , चोरक, सुगन्ध द्रव्य इन सब का स्वामी गुरु है।

4.2.1 वृहस्पति का स्वरूप

सौर मंडल में स्थित ग्रहों में वृहस्पति सबसे बड़ा ग्रह है। संस्कृतवाङ्गमय में वृहस्पति को गुरु , इज्य, देवगुरु सुराचार्य, देवाचार्य, अंगिरस, बृहद्तेज, जीव, सुरमंत्री, धिषण, सूरि, वागीश, वाचस्पति इत्यादि नामों से व्यवहृत किया गया है। कहा गया है कि -

सूर्यमन्त्री सुराचार्यो गुरुर्जीवो वृहस्पतिः।
अंगिरा धिषणः सूरिर्वागीशो वचसां पतिः।।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार वृहस्पति भूमि से सातवीं कक्षा के रूप में स्थित है जो सबसे बडा ग्रह है और देवतओं के गुरु है। वृहस्पति के देवताओं के गुरु बनने के पीछे एक अत्यंत सुंदर कथा स्कंदपुराण में आई है। इसके अनुसार देव गुरु वृहस्पति एक समय काशी में शिवलिंग की स्थापना कर घोर तपस्या की तपस्या करते हुए दश हजार वर्ष बीत गए तब महादेव प्रसन्न होकर उस शिवलिंग से प्रकट हुए और वृहस्पति से कहा मैं तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न हूं अपना अभीष्ट वर मांगो अपने सामने उन अत्यंत प्रकाशवान तेजोमय शिव को देखकर वृहस्पति उनकी स्तुति करने लगे। हे जगन्नाथ आप त्रिगुणातीत जरामरण से रहित भक्तों का उद्धार करने वाले और शरणागत वत्सल हैं। आपके दर्शनों से ही मैं कृत्य कृत्य हूं। मेरी समस्त कामनाएं पूरी हो गई हैं अतः अब कुछ भी प्राप्त नहीं रह गया है वृहस्पति की ऐसी स्तुति सुनकर महादेव ने और भी अधिक प्रसन्न होकर अनेक वर दिए और कहा, हे अंगिरस तुमने बहुत बड़ा तप किया है इसलिए तुम इंद्रादि देवों के पालक तथा ग्रहों में पूज्य हो जाओगे और तुम्हारा नाम वृहस्पति होगा। सूर्यसिद्धांत के अनुसार सृष्टि प्रक्रिया में पंचमहाभूतों में आकाश तत्व के रूप में वृहस्पति विद्यमान हैं।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार वृहस्पति अपने मंडल में चलते हुए क्रांति वृत्त से 60 कला परम शरान्तर में अंतरित होता है। इसकी दैनंदिनी मध्यम गति पांच कला है अर्थात् वृहस्पति प्रत्येक दिन अपनी कक्षा में कोणीय गति से पांच कला चलता है ,और यह एक युग में 364 330 भगण करते हैं। इनका शीघ्रोच्च भगण सूर्य के समान ही है। सूर्य एक महायुग में 4320 000 चलते हैं तो इनका शीघ्रोच्च भगण वही होता है। एक कल्प में मन्दोच्च भगण 900 है। कमलाकर भट्ट के अनुसार यह भूमि से 8123221 योजन के दूरी पर स्थित है। इनका कक्षा प्रमाण 5137 5764 योजन है। सूर्यसिद्धांत के अनुसार इनका बिम्बपरिमाण चंद्र कक्षा में 52.5 योजन तथा 3.5 कलात्मक है। साधन के क्रम में मंद शीघ्र फल के संस्कार से यह स्पष्ट होते हैं ।मंद फल साधन के लिए मंदपरिधि में विषम पदान्त में 32 अंश और सम पदान्त में 33 अंश है। शीघ्रफल साधन में इनकी शीघ्रपरिधि विषम पदान्त में 72 अंश तथा समपदान्त में 70 अंश है। इनका वक्रारम्भ में शीघ्रकेंद्रांश 130 और मार्गारम्भ में 230 अंश पठित है। इनकी मध्यम गति से राशि प्रवेश काल से संवत्सर की उत्पत्ति होती है।

आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार वृहस्पति सूर्य से पांचवे क्रम का ग्रह है और यह सौरमंडल का सबसे बड़ा ग्रह है। सभी ग्रहों के द्रव्यमानों में उससे अधिक वृहस्पति का द्रव्यमान है। सभी ग्रहों में शुक्र के अतिरिक्त सर्वाधिक प्रकाश युक्त हैं ।अर्थात् सभी ग्रहों में शुक्र का प्रकाश अधिक है तत्पश्चात वृहस्पति का प्रकाश आता है। सूर्य से 778333000 किलो मीटर दूर स्थित है। यह 4332.6 दिनों में यानि 11.86 वर्षों में सूर्य का भ्रमण कर लेते हैं। इनके पिण्ड का विषुवृतीय व्यासमान 142880 किलो मीटर है। ध्रुवीय व्यासमान 1335480 किलो मीटर है ।इनका ध्रुवीय प्रदेश 9 घंटा 55 मिनट 25 सेकंड मध्यमकटिबन्ध प्रदेश 9 घंटा 55 मिनट 40

सेकंड के काल में अपना अक्ष भ्रमण पूरा करते हैं। इनका द्रव्यमान 318.4 कक्षीयकेंद्रता 0. 048 कक्षीय गतिमान 13 किलो मीटर प्रति सेकंड है। इनका गुरुत्वाकर्षण 2.64 है घनत्व 0.24 है पृष्ठीय तापमान 140 अंश है। इनके उपग्रहों की संख्या 16 है। उपग्रहों का नाम क्रमशः एलमथिआ, ईओ, यूरोपा, गायनीमिड, कैलिस्टो, लीडा, हिमालि, लाइसिथिआ एलारा, एनानकी, कारमे, पासोफे, सिनोपे, थैबे, एडास्ट्रिया, मैटिस है। वृहस्पति के वायुमंडल में मीथेन, जलवाष्प ,अमोनिया और सिलिकान आधारित योगिक सो बना है। इनमें कार्बन एथेन हाइड्रोजन सल्फाइड फोस्फाइन और सल्फर के होने के भी संकेत मिले हैं। वायुमंडल के वाह्य परत में जमी हुई अमोनिया के क्रिस्टल होते हैं। पराबैगनी मापन के माध्यम से जांचने पर बेंजीन और अन्य हाइड्र कार्बन की मात्रा भी पाई गई है। हाइड्रोजन और हीलियम का वायुमंडलीय अनुपात आद्य और निहारिका की सैद्धांतिक संरचना के बहुत करीब है ऊपरी वायुमंडल में नियान की मात्रा 20 भाग प्रति दश लाख है जो सूर्य में प्रचुर मात्रा में लगभग 10 भाग प्रति दश लाख होती है। वृहस्पति के वायुमंडल में भारी अक्रिय गैसों की प्रचुरता सूर्य से लगभग दो से तीन गुना ज्यादा है। आइए अब वृहस्पति के संपूर्ण स्वरूपों का दर्शन करें।

गृह राशि	-	धनु , मीन
उच्च राशि	-	कर्क
नीच राशि	-	मकर
मूल त्रिकोण राशि	-	धनु
मित्र ग्रह	-	सूर्य, चंद्र, मंगल
सम ग्रह	-	शनि
शत्रु ग्रह	-	बुध , शुक्र
उपग्रह	-	यमघण्ट
अवस्था	-	30
वर्ण	-	गौर
उदया प्रकार	-	उभयोदयी
आकृति विशेष	-	द्विपद
जाति	-	विप्र
रस	-	मधुर
गुण	-	सत्त्व
अंग	-	कटि, जघन
अधि देवता	-	ब्रह्मा
प्रत्यधि देवता	-	इन्द्र
प्रकृति	-	कफ, वात, पित्त
ऋतु	-	हेमंत
कारक भाव	-	2,5,9,10
दशा वर्ष	-	16
शाखा	-	ऋग्वेद

तत्व	-	आकाश तत्व
स्वभाव	-	मृदु
लिंग	-	पुलिंग
वासस्थान	-	भंडार गृह
मूलादिसंज्ञा	-	जीव
रत्न	-	पुखराज
शरीर में धातु विशेष	-	वसा
काल	-	मास
वेद	-	ऋग्वेद
लोक	-	स्वर्ग
अवतार	-	वामन
दृष्टि	-	सम
वाहन	-	मयूर

4.2.2 वृहस्पति के वर्ण का फल

प्रिय अध्येता अब आप वृहस्पति के वर्ण का फल अध्ययन करेंगे। हम सभी लोग जानते हैं कि सभी ग्रह सूर्य से प्रकाशित होते हैं। सूर्य के प्रकाश से ही ग्रहों का प्रकाश संभव हो पाता है। वृहस्पति का वर्ण अर्थात् बिंब स्वरूप यदि आकाश में अग्निवर्ण ,पीतवर्ण, श्यामवर्ण ,लालवर्ण, धूमवर्ण का हो तो पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के अशुभकारी होता है । परंतु वृहस्पति का बिंब सुंदर और विशालकाय दिखाई दे तो पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के लिए शुभकारी होता है इस विषय में संहिता के आचार्य वराह्मीहिर ने लिखा है कि-

अनलभयमनलवर्णे व्याधिः पीते रणागमः श्यामे ।
हरिते च तस्करेभ्यः पीडा रक्ते तु शस्त्रभयम् ॥

धूमाभेऽनावृष्टिस्त्रिदशगुरौ नृपवधो दिवा दृष्टे ।
विपुलेऽमले सुतारे रात्रौ दृष्टे प्रजाः स्वस्थाः ॥

शब्दार्थ- अनलवर्ण = अग्निवर्ण, अनलभयम् = अग्नि भय, पीते = पीतवर्ण, व्याधिः = रोग, श्यामे = कृष्णे, रणागमः = युद्ध भय, हरिते= हरितवर्ण, तस्करेभ्यः = चौर से भय, रक्ते = खुन, शस्त्रभयम् = हथियारों का भय, पीडा = कष्ट, त्रिदशगुरौ = वृहस्पति, धूमाभे = अग्नि वर्ण ,अनावृष्टिः = वृष्टिरहित, दिवा = दिन, नृपवधो = राजा की हत्या , विपुले = महाबिम्ब अमले = निर्मल, सुतारे शोभन तारा (शुभ नक्षत्र), प्रजाः = लोक जन , स्वस्था = निरोग

यदि वृहस्पति अग्निवर्ण का हो तो अग्नि का भय, पीतवर्ण का हो तो व्याधि, श्यामवर्ण का हो तो युद्ध, हरा हो तो चोरों से पीडा, लालवर्ण का हो तो शस्त्र का भय और धूमवर्ण का हो तो अकाल (अनावृष्टि)करता है। यदि वृहस्पति दिन में दिखाई दे तो राजा का नाश और वृहस्पति का विपुल निर्मल विम्ब, ताराओं से सुन्दर रात्रि में दिखाई दे तो प्रजाओं को सर्वथा स्वस्थ करता है।

4.3 वृहस्पति के बारह वर्षों के नाम और फल

प्रिय अध्येता अब आप वृहस्पति के बारह वर्षों के नाम तथा उनके फल का अध्ययन करेंगे। वृहस्पति जिस नक्षत्र में रहते हुए उदय को प्राप्त होते हैं उस नक्षत्र के अनुसार द्वादश मास की तरह द्वादश वर्ष होते हैं। जैसे वृहस्पति कृतिका और रोहिणी नक्षत्रों में उदय को प्राप्त होते हैं तो कार्तिक आदि बारह मास की तरह वर्ष होते हैं। इनमें केवल पंचम, एकादश, और द्वादश वर्ष तीन-तीन नक्षत्रें के होते हैं। अर्थात् फाल्गुन वर्ष ,भाद्रपद् वर्ष और आश्विन वर्ष तीन-तीन नक्षत्रों के होते हैं जिनका विवरण नीचे लिखा जा रहा है।

(रेवती अश्वनी भरणी)-आश्विन वर्ष, (कृत्तिका रोहिणी)-कार्तिक वर्ष, (मृगशिरा आर्द्रा)-मार्गशीर्ष वर्ष, (पुनर्वसु पुष्य)-पौष वर्ष, (अश्लेषा मघा)-माघ वर्ष, (पू.फा. उ.फा. हस्त)-फाल्गुन वर्ष, (चित्रा स्वाती)-चैत्र वर्ष, (विशाखा अनुराधा)-वैशाख वर्ष, (ज्येष्ठा मूल)-ज्येष्ठ वर्ष, (पू.षा. उ.षा.)-आषाढ वर्ष, (श्रवण धनिष्ठा)-श्रावण वर्ष, (शतभिषा पू.भा. उ.भा.)-भाद्रपद् वर्ष। संहिता शास्त्र में इन्हीं वर्षों का फल कहा गया है जिनका अध्ययन आगे करेगें।

4.3.1 कार्तिक, मार्गशीर्ष ,पौष वर्ष का फल

कार्तिक नामक वर्ष में गाड़ी से तथा अग्नि से आजीविका चलाने वाले जैसे लोहार, सोनार आदि और गायों इन सबों को पीड़ित करता है। लोगों में रोग और लड़ाई होती है। परंतु लाल और पीले पुष्पों की वृद्धि होती है।

मार्गशीर्ष नामक वर्ष में अनावृष्टि अर्थात् अकाल जंगली जानवर, चूहा, कीट पतंग, और पक्षियों से फसल का नाश होता है ।मनुष्यों में रोग का भय होता है तथा मित्रों के कारण राजाओं से द्वेष होता है।

पौष नामक वर्ष में संसार का शुभ होता है। राजा लोग पारस्परिक द्वेष त्याग देते हैं। अनाज की मूल्य में द्विगुणित अथवा त्रिगुणित वृद्धि हो जाती है और कर्म की सिद्धि होती है

4.3.2 माघ ,फाल्गुन, चैत्र वर्ष का फल

माघ नामक वर्ष में पितरों की पूजा की वृद्धि, सभी प्राणी संतुष्ट रहते है। आरोग्य प्राप्त होता है, सुंदर वर्षा होती है, अन्नों के मूल्य में समानता और मित्रों का लाभ होता है।

फाल्गुन नामक वर्ष में किसी -किसी स्थान में मंगल कार्य तथा किसी -किसी स्थान में अन्न(आनाज) होता है ।किंतु सर्वत्र मंगल कार्य और अन्न की उत्पत्ति नहीं होती। तथा स्त्रियों की सौभाग्यता नही रहती है।चोरों की प्रबलता और राजाओं की उग्रता बढ़ती है।

चैत्र नामक वर्ष में थोड़ी वर्षा, दुर्लभ अन्न,लोगों में कुशलता ,राजाओं में मित्रता, एकत्रित किए हुए अन्नों की वृद्धि और सुंदर मनुष्यों को पीड़ा होती है।

4.3.3 वैशाख ,ज्येष्ठ, आषाढ वर्ष का फल

वैशाख नामक वर्ष में राजाओं के साथ प्रजागण धर्मनिरत होते हैं। भय रहित तथा आनंद युक्त होते हैं। और यज्ञ कर्म में प्रवृत्त होते हैं तथा सभी अन्नों की वृद्धि होती है।

ज्येष्ठ नामक वर्ष में अच्छे कुल में उत्पन्न, अति धनी, गांव का प्रधान ,राजा गण, धर्म को जानने वाले और कंगनी तथा शमी के अतिरिक्त सब धान्य पीड़ित होते हैं।

आषाढ़ नामक वर्ष में कहीं-कहीं पर धान्य और कहीं-कहीं पर वर्षा का अभाव होता है। योगक्षेम अर्थात् (अलभ्य का लाभ और लब्ध का पालन) मध्यम रूप से होता है तथा राजा लोग अपने काम में व्यस्त रहते हैं।

4.3.4 श्रावण ,भाद्रपद, आश्विन वर्ष का फल

श्रावण नामक वर्ष में सब धान्य अच्छी तरह से पक जाते हैं तथा क्षुद्र (क्रूर) पाखंडी लोग, (वेद निन्दक) और उनके भक्त लोग पीड़ित होते हैं।

भाद्रपद नामक वर्ष में मूंग आदि अन्न और पहले के बोये हुए आनाज पक जाते हैं। परंतु इस वर्ष के आरंभ के बाद के बोये हुए अन्न नहीं होते हैं। तथा संसार में कहीं - कहीं पर अकाल और कहीं-कहीं पर भय होता है।

आश्विन नामक वर्ष में बहुत वर्षा, सर्वथा आनन्दित प्रजा ,सब प्राणियों में प्राणचय अर्थात् अधिक बल की वृद्धि और अन्न की अधिकता होती है।

4.4 संवत्सर पुरुष के नक्षत्रवश अंग विभाग

संवत्सर पुरुष के रोहिणी और कृतिका नक्षत्र शरीर, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र नाभि, आश्लेषा हृदय और मघा पुष्प है। यदि संवत्सर पुरुष के शरीर आदि अंग शुद्ध पाप ग्रह से रहित हो तो शुभ फल देते हैं यदि शरीर रोहिणी और कृतिका में पाप ग्रह हो तो अग्नि तथा वायु का भव्य होता है संवत्सर पुरुष का नाभि पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा में पाप ग्रह हो तो अकाल का भय होता है पुष्प मघा नक्षत्र में पाप ग्रह हो तो मूल पदार्थ और फल का होता है तथा हृदय आश्लेषा नक्षत्र में पाप ग्रह हो तो अन्न का नाश होता है

4.5 संवत्सर का फल

संवत्सर का फल जानने के लिए सबसे पहले संवत्सरों के नाम जानना आवश्यक हो जाता है। संवत्सरों की संख्या 60 है जिसको षष्टि संवत्सर भी कहते हैं।जिनका विवरण अधोलिखित है। इनका फल बृहत्संहिता तथा वशिष्ठ संहिता में बहुत ही स्पष्ट रूप से लिखा गया है जिनका अध्ययन आप करेंगे।

1. प्रभव 2. विभव 3. शुक्ल 4. प्रमोद 5. प्रजापति 6. अंगिरा 7. श्रीमुख 8. भाव 9. युवा 10. धाता 11. ईश्वर 12. बहुधान्य 13. प्रमाथी 14. विक्रम 15. वृषप्रजा 16. चित्रभानु 17. सुभानु 18. तारण 19. पार्थिव 20. अव्यय 21. सर्वजीत 22. सर्व धारी 23. विरोधी 24. विकृत 25. खर 26. नंदन 27. विजय 28. जय 29. मन्मथ 30. दुर्मुख 31. हेमलंब 32. विलंब 33. विकारी 34. शर्वरी 35. प्लव 36. शुभकृत 37. शोभन 38. क्रोधी 39. बिस्वाबसु 40. पराभव 41 प्लवंग 42. कीलक 43. सौम्य 44. साधारण 45. विरोधकृत 46. परिधावी 47. प्रमादी 48. आनंद 49. राक्षस 50. नल 51. पिंगल 52. कालयुक्त 53. सिद्धार्थी 54. रौद्र 55. दुर्मति 56. दुंदुभि 57. रुधिरोद्गारी 58. रक्ताक्षी 59. क्रोधन 60. क्षय

4.5.1 प्रभव संवत्सर का फल

पांच-पांच संवत्सरों समूह में साठ संवत्सरों में 12 युग होते हैं।अर्थात् एक एक युग में पांच

प्रभावादि के 12 युग होते हैं । बारह युगों के स्वामी क्रमशः विष्णु, वृहस्पति, इन्द्र ,अग्नि, प्रजापति ,अहिर्बुध्न्य, पिता, विश्वेदेव, सोम, शक्रानल , अश्विनीकुमार , सूर्य ये बारह युगों के स्वामी हैं। अब आप प्रभावदि संवत्सरों के फल को जानेंगे।

संवत्सरों के प्रामाणिक फल को जानने के लिए बृहत्संहिता के श्लोकों को देना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। अतः आपके सम्मुख श्लोक के माध्यम से संवत्सर का फल बताया जा रहा है ।

आद्यं धनिष्ठांशमभिप्रपन्नो माघे यदा यात्युदयं सुरेज्यः ।
षष्ट्यब्दपूर्वः प्रभवः स नाम्ना प्रपद्यते भूतहितस्तदाब्दः।।

क्वचित्त्ववृष्टिः पवनाग्निकोपः सन्तीतयः श्लेष्मकृताश्च रोगाः ।
संवत्सरेऽस्मिन् प्रभवे प्रवृत्ते न दुःखमाप्नोति जनस्तथापि।।

शब्दार्थ- सुरेज्यः= गुरु, आद्यं = प्रथम, धनिष्ठांशं = धनिष्ठा के प्रथम पाद, अभिप्रपन्न = स्थित, माघे = माघ मास, षष्टयब्दपूर्वः = षष्ट्यब्द के प्रथम वर्ष, अब्दः = वर्ष, वृष्टिः =जल वर्षा पवनः = वायु, अग्निः = दाहक, कोपः = प्रकोप, ईतयः = अतिवृष्ट्यादि सन्ति = होता है, श्लेष्मकृताः = कफ से उत्पन्न, रोगाः = दैहिक कष्ट।

जब धनिष्ठा के प्रथम अंश में स्थित होकर वृहस्पति माघ मास में उदित होते हैं तो उस समय से षष्ट्यब्दों में प्रथम प्रभव नामक वर्ष का प्रारम्भ होता है। यह वर्ष प्राणियों के लिये हितकारी होता है । यद्यपि प्रभव संवत्सर में कहीं कहीं पर वृष्टि का आभाव, कहीं कहीं पर वायु का प्रकोप,कहीं कहीं पर अग्नि का कोप, कहीं कहीं पर अतिवृष्टि आदि का भय और कहीं कहीं पर कफजन्य रोग होते हैं, तथापि पृथ्वी पर स्थित प्राणियों को विशेष कष्ट का अनुभव नहीं होता है।

4.5.2 विभाव आदि चार संवत्सरों के नाम और फल

तस्माद्द्वितीये विभवः प्रदिष्टः शुक्लस्तृतीयः परतः प्रमोदः ।
प्रजापतिश्चेति पथोत्तराणि शस्तानि वर्षाणि फलान्ययैषाम् ॥

निष्पन्नशालीक्षुयवादिसस्यां भयैर्विमुक्तामुपशान्तवैराम्।
संहृष्टलोकां कलिदोषमुक्तां क्षत्रं तथा शास्ति च भूतधात्रीम्।।

शब्दार्थ- विभवः=विभव नामक संवत्सर, प्रजापतिः = प्रजापति नामक संवत्सर, शुक्लः = शुक्ल नामक संवत्सर, परतः = अन्तर, प्रमोदः = प्रमोद नामक संवत्सर, शुभानि, इक्षवः = गन्ने का रस, पालयति, विमुक्तां = वर्जित, कलिदोषमुक्ता = कलियुग के जो दोष है जैसे अधर्म, व्याधि,दारिद्र,शोक, अकालमृत्यु,इनसे रहित।

दूसरे वर्ष का नाम विभव, तीसरे का शुक्ल, चौथे का प्रमोद, और पाँचवें वर्ष का नाम प्रजापति है। ये चारों वर्ष उत्तरोत्तर शुभ फल देने वाले हैं। इन वर्षों में राजाओं की शासनपद्धति ऐसी होती है जिससे अनाज, गन्ना, यव आदि अन्न अच्छी तरह पककर सुन्दर फल देने वाले होते हैं तथा सब प्राणी निर्भय, द्वेषरहिक, आनन्दयुक्त और कलि के दोष (अधर्म, रोग, दारिद्र्य, शोक, कलह मृत्यु आदि) से विमुक्त होते हैं।

4.5.3 द्वितीय युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

अद्योऽङ्गिराः श्रीमुखभावसाह्वौ युवा सुधातेति युगे द्वितीये।
वर्षाणि पञ्चैव यथाक्रमेण त्रीण्यत्र शस्तानि समे परे द्वे ॥

त्रिष्वाद्यवर्षेषु निकामवर्षो देवो निरातङ्कभयश्च लोकः ।
अब्दद्वयेऽन्त्येऽपि समा सुवृष्टिः किन्त्वत्र रोगाः समरागमश्च।।

शब्दार्थ- आद्यः = प्रथम, अङ्गिराः = अङ्गिरा संज्ञक संवत्सर , श्रीमुखः = श्रीमुख संज्ञक संवत्सर , भावसाह्वो = भाव संज्ञक संवत्सर, युवा = युवा संज्ञक संवत्सर, सुधाता = सुधाता संज्ञक संवत्सर, त्रीणि = अङ्गिरा श्रीमुख भाव संवत्सर, शस्तानि = शोभन, समे = न शुभ नाहि अशुभ, आद्येषु = प्रथम, त्रिषु = अङ्गिरा,श्रीमुख,भाव संवत्सरों में, देवः = इन्द्र, निकामं = पर्याप्त, वर्षों = वर्षा होती है, लोकः = जन, निरातङ्कभ्यः = आतङ्क और उपद्रवों से भय, अब्दद्वये = युवा सुधाता संवत्सर, सुवृष्टिः = शोभन वृष्टि, समा = समान , ।

द्वितीय युग के अन्तर्गत अङ्गिरा, श्रीमुख, भाव, युवा, धाता, ये पांच वर्ष होते हैं। इनमें प्रथम तीन (अंगिरा, श्रीमुख और भाव) शुभ और शेष (युवा और धाता) मध्यम हैं। इनमें आदि के तीन वर्षों में अर्थात् अङ्गिरा, श्रीमुख, भाव, वर्षों में देव (इन्द्र) पर्याप्त वर्षा करते है और सब लोग निर्भय रहते हैं। अन्त के दो वर्षों में अर्थात् युवा, धाता, वर्षों में मध्यम रूप से सुन्दर वर्षा होती है, पर इनमें रोग और युद्ध की अधिकता होती है।

4.5.4 तृतीय युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

शाक्रे युगे पूर्वमधेश्वराख्यं वर्ष द्वितीयं बहुधान्यमाहुः ।
प्रमाथिनं विक्रमनप्यधान्यद् वृषं च विन्द्याद गुरुचारयोगात्॥
आद्यं द्वितीयं च शुभे तु वर्षे कृतानुकार कुरुतः प्रजानाम्।

शब्दार्थ- शाक्रे = इन्द्रे, पूर्वं = प्रथम, ईश्वरः= ईश्वर संज्ञा, बहुधान्यः= बहुधान्य संज्ञक संवत्सर, विक्रमम् = विक्रम संज्ञक संवत्सर, प्रमाथिनं = प्रमाथि संज्ञक संवत्सर, वृषं = वृष संज्ञक संवत्सर, गुरुचारयोगात् = वृहस्पतिचार संयोग से, आद्यं = प्रथम, शुभे = प्रशस्त फल, प्रजानाम् = लोक जन, पापं = अनिष्टफल, प्रभाथी = प्रमाथी संज्ञक संवत्सर।

तृतीय (ऐन्द्र) युग में ईश्वर, बहुधान्य, प्रमाथी, विक्रम, वृष ये पाँच वर्ष वृहस्पति के सञ्चारवश होते हैं। इनके प्रथम (ईश्वर) और द्वितीय (बहुधान्य) वर्ष शुभ हैं, तथा इनमें प्रजा गण सत्य युग की तरह (धर्म में निरत, सुखी और दीर्घजीवी) होते हैं। प्रमाथी नाम का तृतीय वर्ष पापफल देने वाला होता है। वृष और विक्रम नामक वर्ष सुमित तो करता है किन्तु रोग और भय देने वाला भी होता है।

4.5.5 चतुर्थ युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

श्रेष्ठं चतुर्थस्य युगस्य पूर्वं यच्चित्रभानुं कथयन्ति वर्षम्।
मध्यं द्वितीयं तु सुभानुसञ्ज्ञं रोगप्रदं मृत्युकरं नतं च ॥
तारणं तदनु भूरिवारिदं सस्य वृद्धिमुदितातिपार्थिवम्।
पञ्चमं व्ययमुशन्ति शोभनं मन्मथप्रबलमुत्सवाकुलम्

शब्दार्थ - चतुर्थस्य युगस्य = हुताशाख नामक युग, पूर्वं = प्रथम, चित्रभानुः= चित्रभानु नामक संवत्सर, श्रेष्ठं = उत्तम, कथयन्ति = कहते हैं, द्वितीयं = सुभानुसंज्ञ युग, मध्यम् = मध्यफल, नतं = नतसंज्ञक संवत्सर, रोगप्रदः = रोग देता है, मृत्युकरं = मृत्यु को करता है, तदनु = पश्चाद्, तारणम् = तारणनामक संवत्सर, भूरि = बहुत, वारि = जल सस्यवृद्धिः = धान्यों की वृद्धि, व्ययम् = व्ययसंज्ञक संवत्सर, शोभनं = श्रेष्ठ, मुशन्ति = कहते है, उत्सवैः = विवाहादि।

चतुर्थ (हुताश) युग के अन्तर्गत चित्रभानु नामक प्रथम वर्ष शुभ फल देने वाला, द्वितीय सुभानु नामक वर्ष मध्यम फल देने वाला और तृतीय नत नामक वर्ष रोगद और मृत्यु को देने वाला होता है। चतुर्थ तारण नामक वर्ष में बहुत जल, धान्यों की वृद्धि और राजाओं में आनन्द की वृद्धि होती है, पञ्चम व्यय नामक वर्ष शुभ है, इसमें काम की प्रबलता और उत्सव (विवाहादि मङ्गलकार्य) होते हैं।

4.5.6 पंचम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

त्वाष्ट्रे युगे सर्वजिदाद्य उक्तः संवत्सरोऽन्यः खलु सर्वधारी।
तस्माद्विरोधी विकृतः खरश्च शस्तो द्वितीयोऽत्र भयाय शेषाः।।

शब्दार्थ - त्वाष्ट्रे युगे = त्वाष्टा नामक युग, आद्य = प्रथम, संवत्सर = वर्ष, सर्वजित् = सर्वजित् नामक संवत्सर, उक्तः = कहा गया है, सर्वधारी = सर्वधारी नामक संवत्सर, विरोधी = विरोधी नामक संवत्सर, विकृत = विकृत नामक संवत्सर, खरः = खर नामक संवत्सर, शस्तो = शुभ, द्वितीयः = त्वाष्टा नामक युग का द्वितीय वर्ष सर्वधारी, भयाय = भय करता है।

पञ्चम (त्वष्ट्रा) युग के अन्तर्गत सर्वजिव, सर्वधारी, विरोधी, विकृत, खर ये पांच संवत्सर होते हैं,।इनमें दूसरा (सर्वधारी) शुभ (सर्वजित, विरोधी, विकृत और खर) भय देने वाले होते हैं।

4.5.7 षष्ठ युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

नन्दनोऽथ विजयो जयस्तथा मन्मथोऽस्य परतश्च दुर्मुखः ।
कान्तमत्र युग आदितस्त्रयं मन्मथः समफलोऽथमोऽपरः।।

शब्दार्थ – नन्दनः = षष्ठ युग का प्रथम संवत्सर नन्दन,विजयः = विजय नामक संवत्सर, जपः = जप नामक संवत्सर, मन्मथो = मन्मथ नामक संवत्सर, परतः = अनन्तर, दुर्मुखः = दुर्मुख नामक संवत्सर, आदितः = प्रथम, त्रयं = वर्ष त्रय, कान्तं = शुभ, मन्मथः = मन्मथ नामक संवत्सर, समफलः = न शुभ न अशुभ, अपरः = पश्चाद्, अधमः = अशुभ फल ।

षष्ठ (प्रोष्ठपद) युग में नन्दन, विजय, जय, मन्मथ, दुर्मुख ये पाँच संवत्सर होते हैं। इनमें आदि के तीन (नन्दन, विजय और जय) शुभ सन्मय मध्यम और शेष (दुर्मुख) अशुभ है।

4.5.8 सप्तम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

हेमलम्ब इति सप्तमे युगे स्याद्विलम्बि परतो विकारि च।
शर्वरीति तदनु प्लवः स्मृतो वत्सरो गुरुवशेन पञ्चमः ॥

इतिप्राया प्रचुरपवना वृष्टिरब्दे तु पूर्वे मन्दं सस्यं न बहुसलिलं वत्सरेऽतो द्वितीये।
अत्युद्वेगः प्रचुरसलिलं स्यात्तृतीयश्चतुर्थो दुर्भिक्षाय प्लव इति ततः शोभनो भूरितोयः॥

शब्दार्थ – सप्तमे = पिता युग, हेमलम्बः = हेमलम्ब नामक संवत्सर,प्रथमः, विलम्बि = विलम्वि नामक संवत्सर, विकारी = विकारी नामक संवत्सर, शर्वरी = शर्वरी नामक संवत्सर, प्लव: = प्लव नामक संवत्सर, वत्सरः = वर्ष, गुरुवशेन = वृहस्पतिचार से , पूर्वं = प्रथम, अब्दे = वर्ष, अनन्तरं = तत्पश्चात्, प्रचुरपवना = बहुत वायु ,वृष्टिः = वर्षा, द्वितीयवत्सरे = द्वितीय संवत्सर, मन्दं =अल्प, सस्यं = धान्य, बहुसलिलं = प्रभूत जल, प्लव: = प्लव नामक संवत्सर, शोभनः = शुभ, भूरितोयः = बहुत जल।

सप्तम (पितृसंज्ञक) युग में हेमलम्ब, बिलम्बी, विकारी, शर्वरी, प्लव ये पांच संवत्सर होते हैं। इनमें प्रथम (हेमलम्ब) संवत्सर में अधिकतर अतिवृष्टि आदि का भय और अधिक वायु के प्रकोप से युत वर्षा होती है। दूसरे (विलम्बी) संवत्सर में थोड़ा अनाज और अधिक वर्षा होती है। तृतीय संवत्सर बहुत उद्वेग करने वाला और अधिक जल देने वाला होता है। चतुर्थ (शर्वरी) संवत्सर अकाल को करने वाला होता है। पाँचवां (प्लव) संवत्सर शुभ फल और बहुत वर्षा कराने वाला होता है।

4.5.9 अष्टम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

वैश्वे युगे शोकहृदित्यथाद्यः संवत्सरोऽतः शुभकृद् द्वितीयः ।
क्रोधी तृतीयः परतः क्रमेण विश्वावसुश्चेति पराभवश्च ॥

पूर्वापरौ प्रीतिकरौ प्रजानामेषां तृतीयो बहुदोषदोऽब्दः ।
अन्त्यौ समौ किन्तु पराभवेऽग्निः शस्त्राभयार्तिद्विजगोभयं च।।

शब्दार्थ – वैश्वे = अष्टम युग वैश्व, आद्यः = प्रथम, शोकहृदिति = शोकहृत नामक संवत्सर, संवत्सरः = वर्ष , शुभकृद्, = द्वितीय संवत्सर शुभकृद् ,तृतीयः क्रोधी = तृतीय संवत्सर क्रोधी, परतः = अनन्तर, विश्ववसुः = चतुर्थ संवत्सर विश्ववसु, पराभवः = वैश्वयुग का पञ्चम संवत्सर पराभव, प्रजानां = जनों का, प्रीतिकरौ = प्रसन्नकर, तृतीयाब्दः = तृतीय संवत्सर क्रोधी, बहुदोषद: = अशुभ फल देना ।

अष्टम (वैश्व) युग में शोकहृत, शुभकृत, क्रोधी, विश्वावसु, पराभव ये पाँच संवत्सर होते हैं। इनमें प्रथम (शोकहृत्) और द्वितीय (शुभकृत्) संवत्सर लोगों को आनन्द देने वाले होते हैं। तृतीय (क्रोधी) संवत्सर अशुभकारी है। अन्त के चतुर्थ (विश्वावसु) और पञ्चम (पराभव) संवत्सर मध्यम फल देने वाले होते हैं परन्तु पराभव संवत्सर में अग्नि का भय, शस्त्र से पीड़ा, रोग से पीढ़ा, ब्राह्मणों गायों को भय होता है।

4.5.10 नवन युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

आद्यः प्लवङ्गो नवमे युगेऽब्दः स्यात् कीलकोऽन्य परतश्च सौम्यः
साधारणो रोधकृदित्यथाब्दः शुभप्रदौ कीलकसौम्यसंज्ञौ ।

कष्टः प्लवङ्गो बहुशः प्रजानां साधारणेऽल्पं जलमीतपश्च।
यः पञ्चमो रोधकृदित्यथाब्दश्चित्रं जलं तत्र च सस्य सम्पत् ॥

शब्दार्थ – नवमे युगे = सोम संज्ञक नवम युग, आद्य = प्रथम, अब्दः = वर्ष, प्लवङ्ग = प्लवङ्ग संज्ञक संवत्सर, अन्यः = द्वितीय, कीलक: = कीलक संज्ञक संवत्सर, परतः =

अनन्तर , सौम्यः = सौम्य संज्ञक संवत्सर, साधारणः = साधारण संज्ञक संवत्सर, रोधकृत् = रोधकृत् संज्ञक संवत्सर, शुभप्रदौ= शुभकर , प्रजानां = जनों का, बहुशो: = बहुत प्रकार, कष्टः= अशुभ, अल्प: = स्वल्प, ईतयः = उपद्रव, अब्दः = वर्ष, चित्रं = नाना प्रकार , सस्यः = धान्य, सम्पत्= कोश।

नवम (सौम्य) युग में प्रवङ्ग, कीलक, सौग्य, साधारण, रोधकृत् ये पाँच संवत्सर होते हैं। इनमें कीलक और सौम्य नामक संवत्सर शुभकर हैं। प्वङ्ग संवत्सर में प्रजाओं को कष्ट होता है। साधारण संवत्सर में थोड़ा जल और अनावृष्टि आदि का भय होता है। रोधकृत् संवत्सर में चित्रजल (कहीं-कहीं पर वृष्टि और कहीं पर अवृष्टि) और धान्य की उत्पत्ति होती है।

4.5.11 दशम युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

इन्द्राग्निदैवं दशमं युगं यत्तत्राधवर्षं परिधाविसंज्ञम् ।
प्रमाद्यथानन्दमतःपरं यत् स्याद्राक्षसं चानलसंज्ञितं च ॥

परिधाविनि मध्यदेशनाशो नृपहानिर्जलमल्पमग्निकोपः।
अलसस्तु जनः प्रमादिसंज्ञे ङमरं रक्तकपुष्पबजीनाशः ॥

तत्परः सकललोकनन्दनो राक्षसः क्षयकरोऽनलस्तथा ।
ग्रीष्मधान्यजननोऽत्र राक्षसो वह्निकोपमरकप्रदोऽनलः ॥

शब्दार्थ – इन्द्राग्निदैवं = इन्द्राग्नि दैव युग, आद्यवर्षं = प्रथम संवत्सर, परिधावी = परिधावी संज्ञक संवत्सर, प्रमादिनं = प्रमादि संज्ञक संवत्सर, विक्रम = विक्रम संज्ञक संवत्सर, राक्षसं = राक्षस संज्ञक संवत्सर, अनलसज्ञितं = अनल संज्ञक संवत्सर, नृपहानिः = राजा का मरण, जलमल्पम् – स्वल्प जल, अग्निकोपः = आग का भय, जनः = लोक, अलसः = आलस्य, डमरं = कलह, सकललोकनन्दनः = समस्त जनों का समृद्धि करने वाला,, क्षयकरः = विनाश करने वाला, वह्निकोपः = अग्नि का कोप, मरकपदः = मारना ।

दशम (शक्राग्नि) युग में परिधावी, प्रमादी, विक्रम, राक्षस, अनल ये पाँच संवत्सर होते हैं। परिधावी संवत्सर में देश के मध्य भाग का नाश, राजा का मरण, थोड़ी वर्षा और अग्निभय होता है। प्रमादी संवत्सर में आलसी मनुष्य, डमर (शस्त्र से कलह), लाल पुष्प और लाल बीज वाले वृक्षों का नाश होता है। विक्रम संवत्सर में सब मनुष्यों को आनन्द होता है। राक्षस और अनल संवत्सर में सब लोगों का नाश होता है परन्तु राक्षस संवत्सर में ग्रीष्म धान्य (यव, गेहूँ, चना आदि) की उत्पत्ति और अनल संवत्सर में अग्नि कोप और मरने का भय होता है।

4.5.12 एकादश युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

एकादशे पिङ्गलकालयुक्तः सिद्धार्थरौद्राः खलु दुर्मतिश्च ।
आद्ये तु वृष्टिर्महती सचौरा श्वासो हनूकम्पयुतश्च कासः ॥

यत्कालयुक्तं तदनेकदोषं सिद्धार्थसंज्ञे बहवो गुणाश्च ।
रौद्रोऽतिरौद्रः क्षयकृत्प्रदिष्टो यो दुर्मतिर्मध्यमवृष्टिकृत्सः।।

शब्दार्थ- एकादशे = एकादश आश्विन युग, पिङ्गलः = पिङ्गल संज्ञक संवत्सर, कालयुक्तः = कालयुक्त संज्ञक संवत्सर, सिद्धार्थ = सिद्धार्थ संज्ञक संवत्सर, रौद्रः = रौद्र संज्ञक संवत्सर,

दुर्मतिः = दुर्मति संज्ञक संवत्सर, आद्ये = प्रथम, महतीवृष्टिः = अत्यधिक वर्षा, सचौरा = तस्करों युक्त, श्वासो = श्वास रोग, हनूकम्पयुतः = ठोढी का कम्पन, कासः = कफरोग, अनेकदोषं = बहु दोषप्रद, बहवो = अधिक, अतिरौद्रः = बहुदुष्ट फलप्रद, क्षयकृत् = नाश करना, मध्यमः = न कम न अधिक, वृष्टिः= वर्षा ,कृत् = करना।

एकादश (आश्विन) युग में पिङ्गल, कालयुक्त, सिद्धार्थ, रौद्र, दुर्मति ये पाँच संवत्सर होते हैं। इनमें प्रथम (पिङ्गल) संवत्सर में अधिक वर्षा, चोरों का भय, श्वास और ठोड़ी को कम्पित करने वाली खाँसी होती है। कालयुक्त संवत्सर में अनेक फल होते हैं। सिद्धार्थ संज्ञक संवत्सर में बहुत गुण (सम्पत्ति आदि) होते हैं। रौद्र संवत्सर में अशुभ फल और प्रजाओं का नाश होता है। दुर्मति संवत्सर में मध्यम वर्षा होती है।

4.5.13 द्वादश युगान्तर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल

भाग्ये युगे दुन्दुभिसंज्ञमाद्यं सस्यस्य वृद्धिं महतीं करोति।
अङ्गारसंज्ञं तदनु क्षयाय नरेश्वराणां विषमा च वृष्टिः॥

रक्ताक्षमब्दं कथितं तृतीयं तस्मिन् भयं दृष्ट्रिकृतं गदाश्च ।
क्रोधं बहुक्रोधकरं चतुर्थं राष्ट्राणि शून्यीकुरुते विरोधैः।।

शब्दार्थ- भाग्ये युगे = भाग्य संज्ञक युग, आद्यं = प्रथम, दुन्दुभिसंज्ञं = दुन्दुभि संज्ञक संवत्सर, सस्यस्य = धान्य की वृद्धि, अङ्गारसंज्ञं = अङ्गार संज्ञक संवत्सर, नरेश्वराणां = राजा अब्दं = वर्ष, रक्ताक्षसंज्ञं = रक्ताक्ष संज्ञक संवत्सर, गदा = रोग, क्रोधं = क्रोध संज्ञक संवत्सर, बहुक्रोधकरं = बहुत प्रकार से क्रोध करना, राष्ट्राणि = देश, विरोधैः = कलह।

द्वादश (भाग्य) युग में प्रथम दुन्दुभि नामक संवत्सर में धान्य की अधिक वृद्धि होती है। द्वितीय अङ्गार संवत्सर में राजाओं का नाश और अत्यन्त भयङ्कर वर्षा होती है। तृतीय रक्ताक्ष नामक संवत्सर में सूकर(सूअर आदि) का भय और रोग होता है। चतुर्थ क्रोध नामक संवत्सर में लोगों को बहुत क्रोध होता है और देश में शान्ति होती है।

4.6 सारांश

वृहस्पतिचार नामक इस इकाई में आपने वृहस्पति चार का परिचय, वृहस्पति ग्रह का स्वरूप तथा वृहस्पति के वर्ण का फल अध्ययन किया। वृहस्पति का वर्ण यदि साफ और सुंदर हो तो पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के लिए शुभकारी होता है। परंतु यदि वृहस्पति का वर्ण अग्निवर्ण पीतवर्ण श्यामवर्ण लालवर्ण धूमवर्ण का हो तो पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के लिए अशुभकारी होता है। वृहस्पति के बिंब के बारे में कहा गया है कि वृहस्पति का बिंब निर्मल विशाल ,कुमुद पुष्प के सदृश, कुंद पुष्प के सदृश, या स्फटिक मणि के सदृश्य कांति वाला हो तो मनुष्यों के लिए हितकारी होता है ।आपने वृहस्पति के 12 वर्षों के नाम तथा फल का अध्ययन किया , जिसमें कार्तिक ,मार्गशीर्ष ,पौष ,माघ ,फाल्गुन, चैत्र , वैशाख , ज्येष्ठ ,आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन वर्ष का शुभाशुभ फल अध्ययन किया।

तत्पश्चात् आपने संवत्सर का फल जाना। आपको भली भांति ज्ञात हो गया होगा कि 60 संवत्सर होते हैं जो प्रभव आदि से क्षय तक होते हैं जिन का फल अलग अलग होता है ।अर्थात् नाम सदृश संवत्सरों का फल होता है जिस प्रकार से संवत्सरों का नाम है वैसे वैसे

उनका फल होता है इस प्रकार से इस इकाई में वृहस्पति के संपूर्ण विषयों का आपने अध्ययन किया।

4.7 शब्दावली

ईतय - उपद्रव
वृष्टि - वर्षा
सस्य - अनाज
तोय - जाल
गद - रोग
लोक - जन
पावक - अग्नि
तस्कर - चोर
नरेश - राजा
व्याधि - रोग
संग्राम - युद्ध

4.8 सन्दर्भ ग्रंथ

बृहत्संहिता- श्री अच्युतानन्द झा -चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
वशिष्ठ संहिता - डॉ गिरिजा शंकर शास्त्री- चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी
ज्योतिष सिद्धान्तमञ्जूषा - डॉ. विनय कुमार पाण्डेय- चौखम्बा सुभारती प्रकाशन वारानासी
प्राच्यविद्या परिशीलन - डॉ. मीनाक्षी मिश्रा- नैसर्गिक शोध संस्था वारानासी
कृषि-पराशर- प्रो. रामचन्द्र पाण्डेय मोतीलाल बनारसी दास
गोलपरिभाषा - डॉ निगम पाण्डेय - चौखम्बा संस्कृत भवन वारानासी

4.9 बोधप्रश्न

1. वृहस्पति चार का परिचय लिखिए।
2. वृहस्पति का स्वरूप का वर्णन कीजिए।
3. संवत्सर पुरुष के नक्षत्र वश अंग विभाग का वर्णन कीजिए।
4. चतुर्थ युगांतर्गत पांच संवत्सरों के नाम और फल लिखिए।
5. माघ फाल्गुन चैत्र वर्ष का फल लिखिए।